Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 4 | ISSN : 2582-0095

हठयोगप्रदीपिका में वस्तिकर्म की विधि एवं उसका महत्व

मनमोहन कुमार
शोध छात्र, विश्वविद्यालय दर्शनशास्त्र विभाग,
बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)

सारांश – वस्तिकर्म दो प्रकार का है–पवनवस्ति तथा जलवस्ति। नौलिकर्म द्वारा अपानवायु को ऊपर खींचकर पुनः मयूरासन से त्यागने को 'वस्तिकर्म' करते हैं। पवनवस्ति पूर्णतः सिद्ध हो जाने पर जलवस्ति सुगम हो जाती है क्योंकि जल को खींचने का कारण पवन ही होता है। वस्तिकर्म के प्रभाव से गुल्म, प्लीहा, उदर और कफ–पित्त जैसे सम्पूर्ण रोग नष्ट होते हैं जो साधक के सप्त धातुओं, दस इन्द्रियों और अंतःकरण को प्रसन्न करता है।

प्रस्तुत शोध–पत्र के इस अध्याय में वस्तिकर्म की विधि, महत्व एवं शरीर–क्रिया विज्ञान में इसकी आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है।

वस्ति शब्द साधारणतया मूत्राशय या नाभि के नीचे के प्रदेश, जिसे साधारण बोलचाल की भाषा में पेड़ू कहते हैं के लिए प्रयुक्त होता है। इस प्रदेश के अंगों में छोटी आँत और बड़ी आँत अपना विशेष महत्व रखती है। ये ही वे अंग हैं जहाँ प्रायः मल एकत्रित होता है। स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए इनकी नियमित सफाई आवश्यक है। जो लोग प्रकृति के साथ चलते हैं, प्रकृति स्वयं उनके अंगों की नियमित सफाई करती रहती है; परन्तु जो प्रकृति के नियमों की अवहेलना करते हैं उनकी पाचनशक्ति बिगड़ जाती है। अनपचा मल आँतों में जमा होने एवं सड़ने लगता है। यदि समय रहते इसकी सफाई की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो दूषित मल अनेकानेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करने का कारण बनता है।

कब्ज या मलावरोध आज की सभ्यता का प्रधान रोग है। इसका मुख्य कारण आज का अप्राकृतिक जीवन, आहार–विहार के नियमों की अवहेलना और निष्क्रियता या आलसी जीवन है। शहरों के लोग प्रायः इससे ग्रस्त रहते हैं। युक्तिव्यपाश्रय–चिकित्सा के अन्तर्गत इन अंगों की सफाई के लिए प्रायः रेचक औषधियों का व्यवहार किया जाता है। सामयिक रूप से तो इनका व्यवहार किसी हद तक ठीक है, परन्तु इनका अभ्यस्त हो जाना और भी खतरनाक है। इससे आँतों की स्वाभाविक मल–निस्सारण–क्षमता नष्ट हो जाती है और वे दिन–पर–दिन दुर्बल होती जाती है।

इस काम के लिए ‘एनिमा’ का भी उपयोग किया जाता है। एनिमा रेचक औषधियों की अपेक्षा अधिक निरापद है, परन्तु सर्वथा निरापद नहीं। इसका भी अधिक उपयोग आँतों को कमजोर बनाता है।

योग में इन अंगों की सफाई के लिए जिस क्रिया का उपयोग किया जाता है, उसे वस्ति कहते हैं। वस्ति एक प्रकार का यौगिक एनिमा है। इसका न केवल उपचारात्मक प्रत्युत् सुधारात्मक मूल्य भी है। एनिमा से तो मात्र बड़ी आँत की सफाई होती है। वस्ति छोटी और बड़ी दोनों ही आँतों को साफ करती है, बल्कि उन्हें स्वभाविक से गतिशील भी बनाती है, जिससे धीरे–धीरे आँतों में मल के एकत्रित होने की प्रवृत्ति ही समाप्त हो जाती है और वे स्वभाविक रूप अपना काम करने लगती हैं।[1]

आज के युग में योग की बढ़ती लोकप्रियता एवं उसके व्यापक प्रचार–प्रसार के लिए उसकी क्रियाओं का न केवल सरलीकरण, बल्कि आधुनिकीकरण

कर उन्हें अधिकाधिक लोकापयोगी और सहज ग्राह्य बनाने की कोशिश की जा रही है। इससे अधिकाधिक लोग उससे लाभ उठाने में समर्थ हो रहे हैं।

आज वस्ति–कर्म का भी जिन रूपों में प्रयोग हो रहा है उससे वह स्त्री–पुरुष, बच्चे–बूढ़े, रोगी–निरोगी सभी के लिए समान रूप से सुलभ हो गई है। कोई भी विवेकशील व्यक्ति थोड़ी–सी जानकारी प्राप्त कर आसानी के साथ उसका अभ्यास कर लाभ उठा सकता है। मात्र थोड़े से आसनों का अभ्यास होना चाहिए। इसे किसी भी योग्य गुरु से प्राप्त किया जा सकता है। सीखने और करने में आसान और लाभ लगभग वे ही जो ऊपर गिनाए गए हैं।

कोई भी व्यक्ति अपनी उम्र, आवश्यकता, स्वास्थ्य, लिंग, परिवेश, साधनों की उपलब्धता आदि को ध्यान में रखते हुए नीचे दी गयी वस्ति–क्रियाओं को अपना सकता है। वस्ति–क्रिया प्रातःकाल की जाती है। यदि कोई किसी असाध्य या जटिल उदररोग से पीड़ित हैं तो शुरु करने के पहले किसी विशेषज्ञ की राय अवश्य ले लेना चाहिए।

1. यदि कोई व्यक्ति पुरानी कोष्ठबद्धता का शिकार है, तो लगभग एक लीटर गर्म पानी में 15 ग्राम सेंधा नमक और 60 ग्राम नींबू का रस मिलाकर पी लें। अथवा नमक और नींबू के रस की मात्रा, उक्त मात्रा की आधी भी रख सकते हैं। यदि कोई मलावरोध या पेट के अन्य किसी रोग से पीड़ित नहीं हैं और मात्र स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए इसका अभ्यास कर रहे हैं, तो गर्म या सादा पानी पीकर भी वस्तिक्रिया कर सकते हैं। यद्यपि नींबू का रस रेचक, पाचक, क्षुधावर्धक, कैल्शियमयुक्त और विटामिन–सी की खान है। पेट में यह जब भी जायेगा लाभ ही करेगा।

2. अब, यदि कोई पुरानी कोष्ठबद्धता या दायमी कब्ज का शिकार है, तो 4–5 बार सर्वांगासन, 3–4 बार मयूरासन या शलभासन तथा 4–5 बार पादहस्तासन करें। यदि पाँच मिनट के भीतर शौच का तीव्र वेग न प्रतीत हो, तो उसके बाद भुजंगासन, अर्धचक्रासन तथा धनुरासन का अभ्यास करे। लाभ अवश्यम्भावी है, हो सकता है थोड़ी देर बाद वेग महसूस हो।

यदि कोई कमजोर है अथवा किसी रोग से पीड़ित है और शारीरिक श्रम करने में असमर्थ है तो सर्वांगासन, योगमुद्रा, पवनमुक्तासन, अर्धकूर्मासन और शलभासन कर अभ्यास करे।

यदि कोई इतना भी नहीं कर सकता तो उसे मात्र 10–15 बार पवनमुक्तासन का अभ्यास करना चाहिए।

यदि पेट में अनपचा भोजन मार्ग को अवरुद्ध कर रहा हो तो 1–2 दिन का उपवास लाभदायक होता है। उपवास की अवधि में अपने स्वास्थ्य और आवश्यकता के अनुसार उपवास के नियमों का पालन करना चाहिए। भोजन जीर्ण होने के बाद आसानी से निकल जायेगा।

3. इनके अतिरिक्त एक क्रिया और है, जिसका कभी–कभी उपयोग किया जाता है। पानी पीने के बाद 8–10 मिनट तक इधर–उधर लुढ़किए। शौच की प्रवृत्ति होने पर जाइए। जितना मल स्वतः निकल जाए निकल जाने दीजिए। बाद में बाएँ हाथ की मध्यमा अँगुली को, जिसका नाखून ठीक से कटा हो, घी, तेल या ग्लीसरीन से से तर कर गुदा में डाल चारों ओर घुमाइए। मल की हाजत मालूम हो तो उसे निकल जाने दीजिए। पुनः अँगुली डाल कर घुमाइए और मल को निकलने दीजिए। कुछ बार ऐसा करने में मलाशय में एकत्रित सारा दूषित मल निकल जायेगा। इस क्रिया को योग की भाषा में गणेश क्रिया, मूलशोधन या सहजशोधन क्रिया भी कहते हैं।

उक्त क्रियाओं को जब भी आवश्यक हो किया जा सकता है। ये सर्वथा निरापद है। वस्ति का ही एक रूप शंखप्रक्षालन–क्रिया भी है, जिसके द्वारा आँतों को पूरी तौर पर धोकर साफ कर दिया जाता है। यह क्रिया न केवल जटिल है, बल्कि इससे सम्बद्ध अंगों पर जोर भी काफी पड़ता है और थकान आ जाती है। इसलिए इसे वर्ष में मात्र एक–दो बार और वह भी देशकाल एवं परिस्थिति का ध्यान रखते हुए ही करना चाहिए।[2]

यंत्र द्वारा वस्ति क्रिया–

इसके लिए जो यंत्र है उसमें एक लम्बा पाईप होता है, जिसके एक सिरे पर रबड़ की नली लगी होती है। बिना नली लगे हुए भाग को किसी टूटी के साथ लगाकर टूटी को खोल दें और आपको जितना फोर्श अच्छा लगे, टूटी को उतने फोर्श पर रखें। फिर दूसरे सिरे पर रबड़ की लगी हुई नली को जिससे पानी बाहर निकल रहा हो उसको 2 इंच गुदा मार्ग में डालें और बाएं हाथ से पाईप को पकड़ कर रखें। अब पानी धीरे–धीरे गुदाद्वार से मलाशय में भर जाएगा और आपको शौच लगकर पानी गुदा मार्ग से अपने–आप बाहर निकलने लगेगा। साथ ही अटका हुआ मल भी गुदा मार्ग से पानी के साथ बाहर आने लगेगा। इस क्रिया को शौच के तुरंत बाद ही सीट पर बैठे–बैठे कर सकते हैं। इस क्रिया के दौरान जब पानी गुदा मार्ग

से बाहर आने लगे तो आप चाहें तो केथेटर को बाहर निकाल सकते हैं या पूरा पेट साफ होने के बाद निकाल सकते हैं। पूर्ण रूप से पेट साफ न होने पर दोबारा इस नली को गुदा मार्ग से अन्दर डालकर इस क्रिया को करें। इससे आँतों में जमा पुराना मल भी बाहर निकल जाता है।

इस यंत्र को शौचालय की टोटी में लगाकर पानी खोल दें। इससे नली में भरी हवा बाहर निकल जायेगी और पानी बाहर आने लगेगा। इसके बाद दूसरे सिरे पर बनी नली या गुदा मार्ग पर तेल लगाकर पाईप नली वाले सिरे को चुटकी से पकड़कर मलद्धार के अन्दर डालें। ध्यान रखें कि पानी चलाते हुए इस क्रिया को करें और यंत्र को पकड़कर रखें। पानी पेट में भरते ही गुदा मार्ग से बाहर आने लगेगा। पानी अन्दर से निकलने लगे तो उसे निकलने दें, परन्तु नली को न हटाएँ। इस तरह पानी अन्दर भरने व निकालने से आँतों की पूरी सफाई हो जाएगी।[3]

वस्तिकर्म का लाभ

वस्तिक्रिया करने से गंदी वायु बाहर निकलती है और कब्ज का रोग खत्म होता है। इससे मन नियंत्रण में रहता है जिससे मन के विचार सात्विक बनते हैं। यह चेहरे पर चमक लाता है और कांति को बढ़ाता है। इस क्रिया के बाद नींद अच्छी आती है तथा आलस्य दूर होता है और शरीर में स्फूर्ति व ताजगी का अनुभव होता है। इससे पेट के सभी रोग दूर होते हैं तथा प्लीहा, यकृत (जिगर), गुल्म (वायु का गोला) तथ गुदा रोग ठीक होते हैं। इस क्रिया से वायु रोग, जलोदर (पेट में पानी का भरना), वात, पित्त व कफ दोष संबंधी रोग दूर होते हैं। यह धातु दोष को दूर करता है। इससे मलाशय का मल साफ हो जाता है, जिससे आँतों के रोग खत्म हो जाते हैं। यह भूख को बढ़ाता है तथा अपान की शुद्धि करता है। यह क्रिया बवासीर, भगन्दर को भी ठीक करती है। यह मसाने की गर्मी को शांत करती है, जठराग्नि को तेज करती है, धातु को पुष्ट करती है तथा गैस को खत्म करती है। शरीर में लगभग सभी रोग कब्ज के कारण ही उत्पन्न होते हैं। कब्ज के कारण अंतड़ियो में मल सड़ने से विषैला दूषित रक्त शरीर के सभी सेलों में मिलकर कई प्रकार के कष्ट और दोष पैदा करता है।

इस क्रिया द्वारा आँतों में जमा मल साफ होकर कब्ज को दूर करता है, जिससे अनेक प्रकार के रोग खत्म हो जाते हैं। कुछ लोग कब्ज के लिए दवा का प्रयोग करते हैं, जो उत्तेजक होती है। इससे आँतों में उत्तेजना पैदा होकर थोड़ा–सा मल ढीला होकर बाहर निकल जाता है। इस तरह बार–बार

दवाई खाने से आँतों की हालत नाजुक बन जाती है, जिससे दवाई का शरीर पर कोई असर नहीं होता। इसलिए वस्ति क्रिया द्वारा आँतों की अच्छी तरह से सफाई की जाती है।[4]

वस्ति मूलाधार के समीप है। रंग लाल है और इसके देवता गणेश है। वस्ति को साफ करनेवाले कर्म को 'वस्तिकर्म' कहते हैं। 'योगासार' पुस्तक में पुराने गूड़, त्रिफला और चीते की छाल के रस से बनी गोली देकर अपानवायु को वश में करने को कहा है। फिर वस्तिकर्म का अभ्यास करना कहा है। वस्तिकर्म के दो प्रकार हैं–

1. पवनवस्ति, 2. जलवस्ति

पवनवस्तिकर्म की विधि

इस वस्ति का अभ्यास करने के लिए जमीन पर पश्चिमोत्तानासन में बैठकर अश्विनी मुद्रा का अभ्यास करते हुए गुदा का आकुंचन और प्रसारण करते हैं, इसमें श्वास की क्रिया होती है, श्वास लेना और छोड़ना है। इसके बाद गुदा द्वारा आँतों में वायु का चूषण करते हुए लगभग 15–20 बार अश्विनी मुद्रा का अभ्यास किया जाता है। इसमें वायु को अन्दर शरीर के भीतर खींचा जाता है। अगर शुरु में वायु को अन्दर खींचने में परेशानी हो तो डेढ़ इंच लम्बे रबर वाले पाइप का प्रयोग कर सकते हैं। रबर पाइप का डेढ़ से दो इंच लम्बा टुकड़ा हल्के से गुदा द्वार के अन्दर डाल देते हैं फिर श्वास खींचते हैं। वह थोड़ा बाहर निकला रहना चाहिए। छाती को फुलाया एवं पेट को अन्दर की ओर खींचा जाता है। इससे आँतों में दबाव पड़ता है। जिससे वायु बाहर निकल जाती है।[5]

यह क्रिया अन्य क्रियाओं की अपेक्षा थोड़ी भिन्न है। इस अभ्यास क्रम में जिस प्रकार सामान्य रूप में पश्चिमोत्तानासन लगाते हैं, उसमें सिर को घुटनों से छूते हैं, किंतु इस क्रिया में शरीर केवल उतना झुकाना है जितने में पैरों को पकड़ा जा सके। फिर शरीर को सीधा करें और पैरों के बीच कुछ अंतर रखें। तत्पश्चात् श्वास लें और थोड़े श्वास लेने पर गुदाद्वार ऊपर की ओर आकुंचन करना तथा श्वास छोड़ते समय गुदाद्वार का प्रसारण करना। इस विधि द्वारा वायु को अंदर खींचा जाता है।

सावधानियाँ : इस क्रिया का अभ्यास यदि पाइप द्वारा किया जा रहा है तो अश्विनी मुद्रा का अभ्यास न करें। उच्च रक्तचाप, पाचन संबंधी गंभीर रोग, हार्निया आदि के रोगियों को इस क्रिया का अभ्यास वर्जित है। वस्ति क्रिया

का ज्यादा अभ्यास करने से जीवाणुओं की वृद्धि की क्रिया में रूकावटें आ जाती है तथा बड़ी आँत के स्नायुओं को क्षति पहुँचती है।

लाभ : इस क्रिया के अभ्यास द्वारा आँतों की सफाई होती है। आमाशय और बड़ी आँतों में विकार उत्पन्न नहीं होते। इसके अभ्यास द्वारा कब्ज, कफ, पित्त, वायु आदि विकारों का नाश होता है। इस क्रिया द्वारा आंतरिक अंगों की मालिश होती है तथा रक्त का शुद्धिकरण होता है। यदि रोगी बवासीर रोग से ग्रसित है तो वह वस्ति अभ्यास में शीतल जल का ही प्रयोग करें। गुदा संबंधों रोगों के लिए यह क्रम अत्यंत लाभकारी है। पवनवस्ति के अभ्यास से कब्ज के सभी विकार दूर हो जाते हैं। आमवात आदि वायु रोगों का शमन होता है। जठरानल प्रदीप्त होती है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि कुपित मल के नाश हो जाने से शरीर निर्मल हो जाता है। अग्नि प्रदीप्त होती है। पाचनशक्ति बढ़ती है। मलावरोध का नाश होता है। रक्त शुद्ध होता है। रोग–प्रतिरोधक–क्षमता बढ़ती है। बढ़े हुए पित्त और कफ अपनी प्रकृत अवस्था में आ जाते हैं। उनसे उत्पन्न विकृतियों का शमन हो जाता है। प्राणी को स्वास्थ्य और सुखायु की प्राप्ति होती है।[6]

(ख) जलवस्तिकर्म की विधि

इस क्रिया के लिए एक बड़ा टब या नाद लें जिसमें आप आसानी से बैठ जाएँ। इसके लिए किसी धातु या लकड़ी की एक मुलायम नलिका लें। जिसकी लम्बाई 4–5 इंच हो और जो आसानी से गुदाद्वार में जा सके। अब उस टब या नाद में उत्कटासन में पंजों के बल बैठकर उस नली को गुदाद्वार में फँसाकर उड्डियान बंध करते हुए अर्थात् पेट को अन्दर खींचते हुए आँतों का आकुंचन करें, फिर 1 सेकेंड रूके और फिर खींचें। इससे पानी आँतों में पहुँच जायेगा। जब पानी आँतों में भर जाए तो नलिका को बाहर निकाल लें और पेट को नौलि क्रिया द्वारा 4–5 बार दाएँ–बाएँ घुमाएँ। फिर आँतों में भरे पानी को गुदाद्वार से बाहर निकाल दें।

सावधानी

इस क्रिया के लिए ऐसी नली लें, जिसका एक सिरा मोटा तथा दूसरा सिरा पहले से हल्का पतला हों। पतले वाले सिरे पर किसी धातु का छल्ला लगा दें और पतले वाले भाग को ही गुदा मार्ग से अन्दर डालें।[7]

नौलिकर्म द्वारा अपानवायु को ऊपर खींच पुनः मयूरासन से त्यागने को ‘वस्तिकर्म’ कहते हैं। पवनवस्ति पूरी सध जानेपर जलवस्ति सुगम हो जाती है, क्योंकि जल को खींचने का कारण पवन ही होता है। जब जल में डूबे हुए पेट से नौलि हो जाय तब नौलि से जल ऊपर खिंच जायेगा।

अर्थात् गुदा के मध्य में छः अंगुल लम्बी बाँस की नली को रखे जिसका छिद्र कनिष्ठिका अँगुली के प्रवेश योग्य हो, उसे घी अथवा तेल लगाकर सावधानी के साथ चार अंगुल गुदा में प्रवेश करें और दो अंगुल बाहर रखे। तत्पश्चात् बैठने पर नाभि तक जल आ जाय इतने जल से भरे हुए टब में उत्कटासन से बैठे अर्थात् दोनों पार्ष्णियों–पैर की एड़ियों को मिलाकर खड़ी रखकर उन पर अपने स्फिच (चूतड़) को रखे और पैरों के अग्रभाग पर बैठे और उक्त आसन से बैठकर आधाराकुञ्चन करे, जिससे बृहद् अन्त्र में अपने आप जल चढ़ने लगेगा। बाद में भीतर प्रविष्ट हुए जल को नौलिकर्म से चलाकर त्याग दे। इस जल के साथ अन्त्रस्थित मल, आँव, कृमि, अन्त्रोत्पन्न सेन्द्रियविष आदि बाहर निकल आते हैं। इस उदर के क्षालन (धोने) को वस्तिकर्म कहते हैं। धौति, वस्ति दोनों कर्म भोजन से पूर्व ही करना चाहिये और इनके करने के अनन्तर खिचड़ी आदि हल्का भोजन शीघ्र कर लेना चाहिये, उसमें विलम्ब नहीं करना चाहिये। वस्तिक्रिया करने से जल का कुछ अंश बृहद् अन्त्र में शेष रह जाता है, वह धीरे–धीरे मूत्र द्वारा बाहर आवेगा। यदि भोजन नहीं किया जायगा तो वह दूषित जल अन्त्रों से सम्बद्ध सूक्ष्म नाड़ियों द्वारा शोषित होकर रक्त में मिल जायगा। कुछ लोग पहले मूलाधार से प्राणवायु के आकर्षण का अभ्यास करके और जल में स्थित होकर गुदा में नाल प्रवेश के बिना ही वस्तिकर्म का अभ्यास करते हैं। उस प्रकार वस्तिकर्म करने से उदर में प्रविष्ट हुआ सम्पूर्ण जल बाहर नहीं आ सकता और उसके न आने से धातु क्षय आदि नाना दोष होते हैं। इससे उस प्रकार वस्तिकर्म नहीं करना चाहिये अन्यथा ‘न्यस्तनालः’ (अपनी गुदा में नाल रखकर) ऐसा पद स्वात्माराम क्यों देते ? यहाँ यह भी जान लेना आवश्यक है कि छोटे–छोटे जन जन्तुओं का नलद्वारा पेट में प्रविष्ट हो जाने का भय रहता है। अतएव नलके मुख पर महीन वस्त्र देकर आकुञ्चन करना चाहिये। और जल को बाहर निकालने के लिये खड़ा पश्चिमोत्तानासन करना चाहिये।[8]

कई साधक तालाब या नदी में से जल का आकर्षण करते हैं, जिससे कभी–कभी जल के साथ सूक्ष्म जहरीले जन्तु आँतों में प्रवेश कर नाना प्रकार के रोग उत्पन्न कर देते हैं। किञ्च गङ्गाजी और हिमालय से निकलने वाली अनेक बड़ी–बड़ी नदियों का जल अधिक शीतल होने के कारण न्यून शक्तिवालों को इच्छित लाभ के स्थान में हानि पहुँचा देता है।

जल अधिक शीतल होने से उसे शोषण करने की क्रिया सूक्ष्म नाड़ियों द्वारा तुरन्त चालू हो जाती है और शीतल जल से आँव या कफ की उत्पत्ति होती है। अतः टब या अन्य किसी बड़े बरतन में बैठकर शुद्ध और सहन हो सके ऐसे शीतल जल का आकर्षण करना विशेष हितकर है।

हठयोग, आयुर्वेद और पाश्चात्त्य एलोपैथिक आदि चिकित्सा शास्त्रों की वस्तिक्रिया भिन्न–भिन्न प्रकार की है। हठयोग में आन्तरिक बल से जल खींचा जाता है। आयुर्वेद में रोगानुसार भिन्न–भिन्न औषधियों के धृत, तैल, क्वाथादि चढ़ाये जाते हैं। पाश्चात्यों ने इसी क्रिया के लिये एक यन्त्र का आविष्कार किया है जिसे 'एनिमा' या 'डूश' कहते हैं। साबुन मिला हुआ गुनगुना जल, रेड़ी का तेल तथा ग्लीसरीन आदि मलशोधक औषधि यन्त्र द्वारा गुदा के मार्ग से आँत में चढ़ाते हैं। पश्चिम देशों में इसका चलन इतना बढ़ गया है कि बहुत लोग तो सप्ताह में एक बार एनिमा लगाना आवश्यक समझने लगे हैं। इस एनिमा द्वारा वस्तिकर्म के समान लाभ नहीं होता, क्योंकि चढ़ा हुआ सम्पूर्ण जल तो बाहर आ नहीं सकता। बल्कि कभी–कभी तो ऐसा भी देखा जाता है कि जल का अधिकांश भीतर रहकर भयंकर हानि कर देता है। अपने उद्योग और परिश्रम द्वारा जो जल चढ़ाया जाता है उसमें तथा जो जल यंत्र द्वारा पेट में चढ़ाया जाता है उसमें उतना ही अन्तर है जितना दस मील पैदल और मोटर पर टहलने में है। इसके अतिरिक्त गरम जल चढ़ाने के कारण वीर्यस्थान और मूत्रस्थान को उष्णता पहुँचती है, जिससे थोड़ी हानि तो बार–बार पहुँचती रहती है। यह दोष हठयोग की वस्ति में नहीं है।[9]

वस्तिकर्म में मूलाधार के पीड़ित और प्रक्षालित होने से लिङ्ग और गुदा के रोगों का नाश होना स्वाभाविक है।[10]

वस्तिकर्म के प्रभाव से गुल्म, प्लीहा, उदर (जलोदर) और वात–पित्त–कफ इनके द्वन्द्व व एक से उत्पन्न हुए सम्पूर्ण रोग नष्ट होते हैं।[11]
'अभ्यास किया हुआ यह वस्तिकर्म साधक के सप्त धातुओं, दस इन्द्रियों और अन्तःकरण को प्रसन्न करता है। मुख पर सात्त्विक कान्ति छा जाती है। जठराग्नि उदीप्त होती है। वात, पित्त, कफ आदि दोषों की वृद्धि और न्यूनता दोनों को नष्ट कर साम्यरूप आरोग्यता को करता है।' हाँ, एक बात इस संबंध में अवश्य ध्यान देने की है कि वस्तिक्रिया करने वालों को पहले नेति और धौतिक्रिया करनी ही चाहिए, जिनका वर्णन नीचे दिया जाता है। अन्य क्रियाओं के लिये ऐसा नियम नहीं है।[12]

राजयक्ष्मा (क्षय), संग्रहणी, प्रवाहिका, अधोरक्तपित्त, भगन्दर, मलाशय और गुदा में शोथ, सन्ततज्वर, आन्त्रसन्निपात (हल्का टाइफाइड), आन्त्रशोथ, आन्त्रव्रण, कफवृद्धिजनित तीक्ष्ण श्वास प्रकोप इत्यादि रोगों में वस्तिक्रिया नहीं करनी चाहिये।

यह वस्तिक्रिया भी प्राणायाम का अभ्यास चालू होने के बाद नित्य करने की नहीं है। नित्य करने से आन्त्रशक्ति परावलम्बिनी और निर्बल हो जायेगी, जिससे बिना वस्ति क्रिया के भविष्य में मलशुद्धि नहीं होगी। जैसे तम्बाकू और चाय के व्यसनी को तम्बाकू और चाय पिये बिना शौच नहीं होता वैसे ही नित्य वस्तिकर्म अथवा षट्कर्म करनेवालों की स्वाभाविक आन्तरिक शक्ति के बल से शरीर शुद्धि नहीं होती।[13]

इसमें जल में नाभि के पर्यन्त बैठकर उत्कट आसन लगाएँ और गुदा प्रदेश को सिकोड़ें और फैलाएँ। अर्थात् आकुंचन–प्रसारण करें। इसी को जल वस्ति कहा जाता है। इसके अभ्यास द्वारा शरीर सुंदर बना रहता है। इस क्रिया के अभ्यास में सर्वप्रथम नाभि तक गहरे जल में उत्कट आसान में बैठ जाएँ। उसके लिए पैरों के बीच थोड़ा अंतर रखकर जांघों को हाथ का सहारा देकर बैठ जाएँ तथा श्वासों द्वारा पेट को नहीं, बल्कि गुदाद्वार द्वारा आकुंचन और प्रसारण करें। इस क्रिया का अभ्यास करने के लिए किसी बड़े पात्र, नदी, तालाब इत्यादि हो तो ज्यादा अच्छा है। यौगिक क्रियाओं में शरीर की शुद्धि एवं उपचार हेतु जल काफी उपयोगी है। इस क्रिया का अभ्यास करते रहे तो जमा हुआ सूखा मल धीरे–धीरे निकलता है।

लाभ : इस क्रिया द्वारा नाड़ियों की शुद्धि होती है। बवासीर और दूषित वायु से शरीर को मुक्ति मिलती है। उदर प्रदेश संबंधी रोगों का नाश होता है। शरीर का तेज बढ़ता है और शरीर कांतिमान होता है एवं शरीर के रोग से मुक्ति मिलती है।[14]

व्यक्ति के शरीर के तेज में, कांति में वृद्धि होती है। हमारे शरीर के आन्तरिक अंगों में जल के सम्पर्क से आन्तरिक अंगों पर प्रभाव पड़ता है और उन्हें स्वास्थ्य एवं शक्ति प्राप्त होती है।[15]

सन्दर्भ सूची :–

1. यौगिक षट्कर्म (योग की शरीर–शोधन क्रियाएँ) डॉ० अयोध्या प्रसाद 'अचल', चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, पृष्ठ–8–9.
2. वस्ति पश्चिमोत्तानेन् चालयित्वा शनैरधः।
   अश्विनीमुद्रया पायुमाकुञ्चयेत् प्रसारयेत्।।48।।

घेरण्ड–संहिता (योगत्त्वम्), आचार्य श्रीनिवास शर्मा.
3. गूगल प्रिन्ट मीडिया.
4. वही.
5. हठयोग का परिचय, डॉ० नितिन ढ़ोमणे, पृष्ठ–79–80.
6. हठयोग के सिद्धान्त, डॉ० नवीन चन्द्र भट्ट, नेहा पाण्डेय, पृष्ठ–113–114.
7. गूगल प्रिन्ट मीडिया.
8. नाभिदध्नजले पायौ न्यस्तनालोत्कटासनः।
आधाराकुञ्चनं कुर्यात क्षलानं वस्तिकर्म तत्।।26।।
हठयोगप्रदीपिका, स्वामी श्रीद्वारिकादासशास्त्री, पृष्ठ–31.
9. कल्याण योगाङ्क, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ–645.
10. यही जु वस्तिकर्म है, गुरु बिनु पावै नाहिं।
लिंग–गुदा के रोग जो, गर्मी के नशि जाहिं।।
कल्याण योगांक, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 646.
11. गुल्मप्लीहोदरं चापि वातपित्तकफोद्भवाः।
वस्तिकर्म प्रभावेण क्षीयन्ते सकलाभयाः।।27।।
हठयोगप्रदीपिका, स्वात्माराम–कृत, पृष्ठ–48.
12. धात्विन्द्रियान्तः करणप्रसादं दद्याच्च कान्तिं दहनप्रदीप्तिम्।
अशेषदोषोपचयं निहन्यादभ्यस्यमानं जलवस्तिकर्म।।28।।
हठयोगप्रदीपिका, स्वामी श्रीद्वारिकादासशास्त्री, पृष्ठ–31
13. कल्याण योगाङ्क, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ–646.
14. हठयोग के सिद्धान्त, डॉ० नवीन चन्द्र भट्ट, नेहा पाण्डेय, पृष्ठ–113.
15. हठयोग का परिचय, डॉ० नितिन ढ़ोमणे, पृष्ठ–79.

××××